

## अष्टांगहुदय – चिकित्सास्थान

### 1) ज्वरचिकित्सा –

वातज ज्वर – दुरालभादी क्वाथ पित्तज ज्वर – इन्द्रयवादी क्वाथ कफज ज्वर – वत्सकादी गण क्वाथ  
कफपित्तज ज्वर – आरग्वधादी गण क्वाथ मधासह.

वातज ज्वर – वातव्याधी चिकित्सितोक्त तिल्वक घृत त्रिवृत न डालते हुए देना।

पित्तज ज्वर – कुष्ठचिकित्सोक्त तिकक घृत, वृष घृत, त्रायमाण सिद्ध घृत

- ज्वरक्षीणस्य न हितं वमनं च विरेचनम् । कामं तु पयसा तस्य निरूहैर्वा हरेन्मलान् ॥  
 औषधीगच्छज ज्वर में पित्तशामक व विषज ज्वर में विषघ्न चिकित्सा

### 2) रक्तपित्त चिकित्सा –

1) साध्य रक्तपित्त – उर्ध्वगं बलिनो अवेगं एकदोषानुगं नवम् । रक्तपित्तं सुखे काले साध्येद निरूपद्रुतम् ॥  
 सुखे काले – हेमंत व शिशिर ऋतु,

2) याप्य – अधोग, व दोषद्वयानुगम

3) असाध्य – शान्तं शान्तं पुनः कुप्यन् मार्गान्मार्गान्तरं, अतिप्रवृत्तं मन्दाग्नेः त्रिदोषं द्विपथं

**चिकित्सा** – उर्ध्वग – तिक कषाय रस से शमन अधोग में मधुर रस से बृंहण

उर्ध्वग में प्रथम तर्पण व अधोग में प्रथम पेया

ग्रथीत रक्त में पारावत शकृत क्षोद्र के साथ लेहन

पित्तज ज्वरोक्त व क्षतक्षीणोक्त औषधी चिकित्सा रक्तपित्त में उपयोग करे ।

### 3) कास चिकित्सा –

1) पित्तज सकफ कास – वमन . तनु कफ हो तो त्रिवृत व मधुर द्रव्य से विरेचन  
 क्षयज कास चिकित्सा सूत्र – बृंहण दीपन व स्त्रोतोशोधन व्यत्यास मे करनी चाहिए

4) श्वास हिकका – चरकसमान

5) राजयक्षमा –

आजं क्षीर घृतं मांसं क्रव्यान्मासं च शोषजीत् ।

पंचपंचमूल सिध घृत – यक्षमानाशन

क्षीरबटपल घृत – पंचकोल + यवक्षार (चरक – गुल्म अधिकार)

### 6) छर्दिहुद्रोगतृष्णा चिकित्सा –

- |                               |  |
|-------------------------------|--|
| 1) वातज छर्दि – सैंधव + सर्पि | 2) पित्तज छर्दि – द्राक्षा इक्षु त्रिवृत आदी ने विरेचन |
| 3) कफज छर्दि – वमन            | 4) कृमीज छर्दि – कृमीज हुद्रोग औषध                     |

अन्नात्ययज तृष्णा – मंड या मंथ शीत या उष्ण अवस्था मे पान

श्रमज तृष्णा – मांसरस वा मंथ सितासह

आतपज तृष्णा – यवकोलाम्बुसकु सिद्ध मंथ

शीतस्नानज तृष्णा – मद्याम्बु वा गुडाम्बु

मदयज तृष्णा – अर्धजलयुक्त मदय, अम्ल वा लवण द्रव्य

स्नेहपानज तृष्णा – अग्नी तीक्ष्ण होनेपर शीतजल

स्निग्धान्नज तृष्णा – शीतजल गुडासह

गूरू अन्नजन्य तृष्णा – उष्णाम्बुपान पश्चात वमन

रोगोपसर्गज तृष्णा – धान्याम्बु वा ससितमधु

### 7) मदात्यय –

हीनमिथ्याअतिपीतेन उत्पन्न मदात्यय – मद्य सम मात्रा मे पान

पानात्यय मे सप्तरात्र अथवा अष्टरात्र औषध देनी चाहिए ।

अष्टांगलवण चूर्ण – कफज मदात्यय

मेद कफ व वात से जो विकार होते हैं वे विधीयुक्त मध्यापान से नष्ट होते हैं।

वात – गौड़िक पैषिटिक मध्य, पित्त – अंबु सह मधु कफ – मार्द्विक व माधवारिष्ट

कफप्रकृती – भोजनपूर्व मद्यापान पित्त प्रकृति – भुक्तस्योपरी वातप्रकृती – भोजन मध्य

### 8) अर्श चिकित्सा –

1) आद्रार्श (रक्तस्त्रावी) अर्श – क्षार से दहन करे

2) शुष्कार्श – क्षार अथवा अग्नि दोने से दहन कर सकते हैं।

3) महत अर्श व रूग्ण बलवान हो तो – छेदन पश्चात दहन

उपरोक्त चिकित्सा अर्श मे हर 7-7 दिन मे करनी चाहिए।

बहु अर्श होने पर – प्रथम वाम अर्श ततपश्चात दक्षिण अर्श ततपश्चात पृष्ठ व आखीर मे अग्रज अर्श दहन

अर्श मे लेपनार्थ – अर्कपय, स्नुहीकांड, कटुकालाबु पल्लव, करंजीव बस्तमूत्र

कोविदार चूर्ण मधित (तक्र) सह पान

अत्यर्थमन्दकायाग्ने: तक्रमेव अवचायेत।

तक्र सेवन काल – 7,10, 15 वा एक मास

अनुवासन योग्य – उदावर्तपरीता ये ये चान्यर्थ रूक्षिताः विलोमवाताः शूलार्ताः तेषु इष्टमनुवासनम्

रक्तार्श चिकित्सा – वातानुबंध – स्निग्धशीत चिकित्सा कफानुबंध – रूक्षशीत चिकित्सा

दुष्ट रक्त मे रोगी बलवान हो तो – शोधन व गोगी जलनान न हो तो – लंघन

दोषाणां पाचनार्थाय च वहिसंधुक्षणाय च। संग्रहाय च रक्तस्य परं तिक्तैः उपाचरेत् ॥

किंजल्क (केशर) + शर्वरा वा तील + नवनीत रक्तार्शनाशन

रक्तार्श – पिच्छाबस्ती प्रयोग

अर्श चिकित्सासूत्र – व्यत्यासान्मधुराम्लानि शीतोष्णानि च योजयेत्।

नित्यमग्निबलापेक्षी जयति अर्शकृतान् गदान् ॥

द्रव्य श्रेष्ठत्व – शुष्केषु भल्लातकम् अग्रयं उक्तं भैषज्यं आदेषु तु वत्सकत्वचम् ॥

सर्वेषु सर्वतुषु कालशेयं अर्शसु बल्यं मलापहं च ॥

त्रय विकार निदानत्व – अर्शो अतिसार ग्रहणीविकारः प्रायेण च अन्योन्य निदानभूतः ।

सन्नेजनले सन्ति न सन्ति दीप्ते रक्षेदस्तेषु विशेषतोऽग्निम् ॥

### 9) अतिसार चिकित्सा –

अतीसारो हि भूयिष्ठं भवति आमाशयान्वयः। हत्यानिं वातजे अपि अस्माद् प्राक् तस्मिंल्लंघनं हितम् ॥

वातज हो तो भी अतिसार मे प्रथम लंघन देना चाहिए (आमाशयज होने से)

हरीतकी महत्व – अपि चाध्मानगुरुताशूलस्तैमित्यकारिणी। प्राणदा प्राणदा दोषे विबद्धे संप्रवर्तिनी ॥

प्रवहिका चिकित्सा – बालबिल्वं गुडं तैलं पिप्पलीविश्वभेषजम्। लिह्याद्वाते प्रतिहते सशूलः प्रवाहिका ॥

बिम्बिशी मे तैल की श्रेष्ठता –

तैलं मन्दालस्यापि युक्त्या शर्मकरं परम् ।

वाय्वाशये सतैले बिम्बिशी न अवतिष्ठते ॥

तैल वा धृत अनुवासन योग्य अवस्था –

प्रवाहणे गुदभ्रंशे मूत्राघाते कटिग्रहे। मधुराम्लैः शृतं तैलं धृतं वाऽपि अनुवासनम् ॥

गुदभ्रंश मे – गोफणा बंध

निराम अतिसार मे – अजादुध्द प्रयोग

शकृत व रक्तप्रवृत्ती व्यत्यास मे हो तो – पलाशफल निर्युह दुध सह पान

पुटपाक योग्य अवस्था – रूजा आम रहीत व दीप्ताग्नियुक्त रूण मे नानावर्ण अतिसार होनेपर

पिज्जातिसारी वा रक्तातिसारी मे दारूण गुदपाक मे – छागपय हितकर

पिच्छाबस्ती दान योग्य अवस्था – 1) अल्पाल्पं बहुशो रक्तं सशूलमुपवेश्यते ।

2) यदा विबध्दो वायुश्च कृच्छ्राच्चर्ति वा न वा ।

3) वातश्लेष्मविबंधे वा कफे वा अतिसरति अपि वा ।

4) शूले प्रवाहिकायां वा पिच्छाबस्तिं प्रयोजयेत

मल के पूर्व वा पश्चात रक्तप्रवृत्ती होनेपर – शतावरी धृतपान

कफ क्षीण होनेपर – अम्लधृत लाक्षादी धृत षट्पल वा पुराण धृतपान

क्षीणकफ, दीर्घकाल अतिसार से दुर्बल अनिल प्रबल हो – वात को त्वरया जीतना चाहिए ततपश्चात पित्त व ततपश्चात कफ की चिकित्सा करनी चाहिए या तीनो मे बलवान की प्रथम चिकित्सा अतिसार शमन होने के लक्षण – यस्योच्चारं विना मूत्रं पवनो वा प्रवर्तते । दीप्तानेलधुकोष्ठस्य शान्तस्तस्योदरामय

#### 10) ग्रहणी चिकित्सा –

ग्रहणीमाश्रितम् दोषं अजीर्णवत् उपाचरेत् । अनिसारोऽविधिना तस्याम् च विपाचयेत् ॥

वातज ग्रहणी मे परिपक्व आम होनेपर दीपनीय सर्पि पान कराये ।

अनुवासन अवस्था – शुद्ध रूक्षाशय व बध्द वर्चस होनेपर दीपनीय अम्ल वातघ्न द्रव्य सिध्द अनुवासन दे

कफज ग्रहणी – ग्रहण्यां इलेष्मदुष्टायां तीक्ष्णैः प्रच्छर्दनैः कृते । कट्वम्ललवणक्षारैः क्रमादग्निं विवर्धयेत् ॥

सवात कफज ग्रहणी मे मातुलंगादी सिध्द धृत / धान्यन्तर धृत (गुल्माधिकार), षट्पल धृत (क्षय्यचिकित्सा),

भल्लातक धृत (गुल्मचिकित्सा), अभय धृत (उदर) इनका उपयोग करे ।

अग्निवर्धन मे स्नेह श्रेष्ठता –

सेन्हमेव परं विदयाद् दुर्बलानलदीपनम् । नालं स्नेह समिधस्य शमायान्नं सगुर्वपि ॥

अत्यग्नि मे – आविक मास सेवन, स्थिर जल मत्स्य, कृशारा पायस पौष्टिक गुडविकृती इ.

#### 11) मूत्राधात चिकित्सा –

तस्य पूर्वेषु रूपेषु स्नेहादेक्रम इष्यते । ( अश्मरी)

अश्मरी वैशिष्ट्य – अश्मरी दारूणो व्याधिः अन्तकप्रतिमो मतः । तरूणो भेषजैः साध्यः प्रवृद्धश्चेदमर्हति ॥

अश्मरीनाशनार्थ उपाय – नृतयकुंडलबीजानां चूर्णं माक्षिकसंयुतम् ।

अविक्षीरेण सप्ताहं पीताश्मरीपातनम् ॥

अश्मरीच्यावन उपाय – मदयं वा नीगदं पीत्वा रथेनाश्वेन वा व्रजेत् ।

शीघ्रवेगेन संक्षोभात् तथास्य च्यवते अश्मरीम् ॥

अश्मरी शस्त्रकर्म संदर्भत – अक्रियायां ध्रुवो मृत्यु क्रियायां संशयो भवेत् ।

निश्चितस्यापि वैद्यस्य बहुशः सिध्दकर्मणः ॥

अश्मरी शस्त्रकर्म – सर्पफणामुखी शलाका – सिवनी से एक यव अंतर पर छेद ।

शस्त्रकर्म व्यापद – छेदसमये शस्त्र उत्संगवत न रखने से मूत्रस्रावी व्रण व मूत्रप्रसेक क्षरण होता है ।

बस्तीस्थ अश्मरी निर्हरणार्थ एक बाजू से व्रण करने पर व्रण साध्य होता है

उभयतः व्रण होनेपर असाध्य होता है

मूत्राश्मरी शस्त्रकर्म समये मर्म रक्षण –

मूत्रशुक्रवहौ बस्तिवृषणौ सेवनी गुदम् ।  
मूत्रप्रसेकं योनीं च शस्त्रेणाष्टौ विवर्जयेत् ॥

12) प्रमेह चिकित्सा –

बलवान् प्रमेही रूग्ण मे सर्तप्रथम त्रिकंटकादी स्नेह से स्नेहन व पश्चात् वमन वा विरेचन सुरसादी गण कषाय से आस्थापन, पित्ताधिक्य होनेपर न्यग्रोधादी गण से आस्थापन

धान्वन्तर धृत – प्रमेह अधिकार (फलश्रृती – प्रमेह पिटिका)

अयस्कृती – असनादी गण औषध क्वाथ +गुड + मधु + वत्सकादी गण कल्क = धृत भाज्जीत पात्र मे आस्थापन ततपश्चात् उक्त द्रव मे तीक्ष्ण आयस पत्र निर्वापण – निर्वापण पश्चात् उक्त पत्र उसी क्वाथ मे क्षय होनेतक रहने दे = अयस्कृती

अधनी व्यक्ति मे प्रमेह निराकरण उपाय –

अधनछत्रपादरहितो मुनिवर्तनः ।  
योजनानां शातं यायात् खनेद्वा सलिलाशयान् ॥  
गोशकृन्मूत्रवृत्तिर्वा गोभिरेव सह व्रजेत् ।

कृश प्रमेही रूग्ण मे औषध व आहार बृहण होना चहिए किन्तु मेदकर व मूत्रल नहीं होना चाहिए ।

अपक्व प्रमेह पिटिका – शोफवत् चिकित्सा पक्व पिटिका – व्रणवत् चिकित्सा

प्रमेह पूर्वरूप मे – क्षीरीवृक्षाम्बु पान, बस्तमूत्र पान, वा तीक्ष्ण शोधन करे दयोकी प्रमेही प्रायः दुर्विरेच्य होता है ।

प्रमेह मे 1) त्रण रोपणार्थ – एलादी गण सिध तैल, 2) उद्वर्तनार्थ – आरग्वधादी गण

3) परिषेकार्थ – असनादी गण कषाय 4) पान व अन्नार्थ – वत्सकादी गण

मधुमेहित्व प्राप्त हुआ व भिषक द्वारा वर्जीत रोगी को 400 तोला शिलाजतु सेवन करना चाहिए ।

13) विद्रधिवृद्धी चिकित्सा अध्याय –

विद्रधिं सर्वमेवामं शोफवत्समुपाचरेत् । प्रततं च हरेदकं पक्वे तु व्रणवत् क्रिया ॥

आभ्यंतर अपक्व विद्रधी – वरुणादी गण क्वाथ

पानभोजन लेपनार्थ – मधुशिशु प्रयोजितः ।

सर्व प्रकार के विद्रधी मे इतर औषधी या कषाय मे गुगुल वा शिलाजतु का उपयोग ।

स्तनविद्रधी मे सर्व उपचार व्रणवत् करे पर उपनाह वर्ज्य

आंत्रवृद्धी मे – सुकुमारक रसायन प्रयोग

स्नेहन रेचन अनुवासन इ. उपायद्वारा आंत्रवृद्धी ठिक न होनेपर वंक्षणस्थ स्थाने दृहन – अर्धेन्दुशलाका वापर

14) गुल्मचिकित्सा –

स्नेहपानं हितं गुल्मे विशेषेण उर्ध्वनाभीजे । पक्वाशयगते बस्ति: उभयं जठराश्रये ॥ (स्नेह व बस्ती)

बस्तीकर्म परं विद्याद् गुल्मधनं तद्वी मारूतम् ।

चूर्ण प्रयोग – शार्दुल चूर्ण, वैश्वानर चूर्ण

हिंगवाष्टक चूर्ण – त्रिकटूकं अजमोदा सैन्धवं जीरकं द्वे । समधरणधृतानां अष्टमो हिंगुभागः ॥

प्रथमकवलभोज्यः सर्पिषा चूर्ण एष जनयन्ति जाठरानिं वातगुल्मं निहन्ति च ॥

एरुंडतैल प्रयोग – हुल्म मे कफानुबंध होनेपर प्रसन्ना के साथ व पित्तानिबंध होनेपर –पयासह

लशुनक्षीरप्रयोग

स्निग्ध व उष्ण गुणोत्पन्न पित्तज गुल्म – द्राक्षा अभया गुड इ. से स्त्रंसन

रूक्ष व उष्ण गुण से उत्पन्न पित्तज गुल्म – तिक्कक्घृत , वासा धृत, तृणपंचमूल वा जीवनीय गण सिद्ध धृत से शमन चिकित्सा करे ।

पित्तज गुल्म मे पूर्वरूप मे विदाह होनेपर – अनेक बार रक्तमोक्षण

रक्तपित्ताती वृद्धी होनेपर – पित्तज विद्रधी समान क्रिया निर्देश

कफज गुल्म मे प्रथम वमन व वमन अयोग्य होनेपर – उपवास

चिकित्सा सूत्र (सामान्य)– सर्वत्र गुल्मे प्रथम स्नेहस्वेदोपपादीते । या क्रिया क्रियते याति सा सिध्दीं न विरुद्धिते प्रमुख कल्प – मिश्रक स्नेह, दंतीहरीतकी, क्षारागद,

कृतमूल, महावास्तु, कठिन, स्तिमीत गुरु, गूढमांस गुल्म मे – क्षार अरिष्ट अग्निकर्म उक्त उपक्रम – एकान्तरं द्व्यन्तरं वा विश्रम्यम् अथवा त्व्रहम् ।

रक्तगुल्म चिकित्सा – गतप्रसव काल मे स्निग्ध स्विन्न पश्चात स्नेहविरेचन

पलाशक्षार प्रयोग , गुल्मशिथीलकरणार्थ पलाशक्षारसिद्ध धृत

रक्तगुल्म भेदन न होनेपर – योनीविरेचन प्रयोग (स्नुहीक्षीर द्वारा वा क्षार द्वारा)

अवर्तमान रूधीर मे – गुल्मप्रभेदन रूधिरातिप्रवृत्ती मे – रक्तपित्तहरी क्रिया

#### 15) उदरचिकित्सा –

उदर मे चिकित्सा उपरान्त झेष दोष निवृत्यर्थ – सहस्र द्वीतकी गोमूत्रासह पान वा क्षीरामह पान

स्नुकक्षीरभावीत सहस्र पिप्पली सेवन वा वर्धमान पिप्पली सेवन , शिलाजतु क्षीरसह गुगुल सेवन वा आर्द्रक रस+ क्षीर सेवन

दुर्बल उदरी रूग्ण मे प्रथम अनुवासन देकर ततपश्चात क्षीरदस्ती से शोधन करे ।

दुर्बल कफज उदरी रूग्ण मे अरिष्टपान गोमूत्र अङ्गस्कृती सक्षारतैलपान आदी चिकित्सा करे ।

सान्निपातज उदर मे पनभोजनसंयुक्त कर स्थावर विष दान अथवा सर्प द्वार फल भे विषनिर्गमन होनेपर

उक्त फल का सेवन, विष प्रमाणी गुण से कार्य करता है ।

बधोदर – स्वेदन पश्चात मूत्रतीक्षण तैललवणयुक्त निरूह, परिस्त्रंसी अन्न, तीक्ष्ण विरेचन, उदार्वर्तहर कर्म

छिद्रोदर – स्वेदन कर्म छोडकर अन्न उपचार कफज उदर समान , जातंजातं जलम स्त्राव्यं

दकोदर – अपां दोषहराणी आदौ. मूत्रयुक्तानि तीक्ष्णनि विविध क्षारवन्ती च ।, दीपनीय कफज्जन आहार

दकोदर मे षोडश दिन तक तक जलनिर्हण करे ।

तक्रप्रयोग – नातिसान्द्र मधुर तक्र पान प्रशास्त , वातोदर मे – कणा व लवण सह, पित्तज उदर – उषण (मरीच)

शर्करासह, कफज मे – यवानी सैंधव अजाजी सह , सान्निपातज मे – त्र्यूषण क्षार लवण सह

बधोदर मे- हपुषायवानीपटु(सैंधव) अजाजी से , प्लीहोदर मे – मधु तैल वचा शुंठी शताळा

कुष्ठ सैंधव सह, छिद्रोदर मे पिप्पली व मधुसह , सलिलोदर मे – व्योषसह

#### 16) पांडुचिकित्सा –

नवायस चूर्ण (लोह) अनुपान – तक्र / मधु+आज्य, / उष्णोदक

कामला की औषधी पित्तज्जन व पित अविरोधी होनी चाहिए ।

शिला गैरीक धात्री का अंजन कामला नाशक है ।

कुंभकामला मे एक मासपर्यन्त शिलाजतु गोमूत्रसह, माध्यिक (सुवर्णमाध्यिक) या हिरण्य किटट् (रौप्य)

#### 17) शोथचिकित्सा –

गुडादूर्क योग चरकसमान वर्णन

## 18) विसर्पचिकित्सा –

आदावेव विसर्पेषु हितं लंघनरूक्षणम् । रक्तावसेको वमनं विरेकः स्नेहनं न तु ॥  
 शाखादुष्ट रूधिर मे रक्तावसेचन – शाखादुष्टे तु रूधिरे रक्तमेवादितो हरेत् ।  
 अग्निविसर्प मे शतधौत लेप अथवा केवल धृतमंड लेप  
 ग्रंथीविसर्प मे दशमूल सिद्ध तैल वादशमूल क्वाथ से सेचन  
 एकतः सर्वकर्माणि रक्तमोक्षणं एकतः  
 विसर्पे न हि असंसृष्टो अस्त्रपित्तेन जायते । रक्तमेवाश्रयश्चास्य बहुशोऽस्त्रं हरेदतः ॥  
 विसर्प का आश्रय रक्त है ।

## 19) कुष्ठचिकित्सा –

कुष्ठिनं स्नेहपानं पूर्वं समुपाचरेत् ।  
 सर्व प्रकार के कुष्ठ मे अरुष्वार, तुवरक सर्षप तैल, या विडंग भल्लातक पथ्या सिद्ध धृत सेवन  
 ललाट हस्त पाद फिसिरा वेधन  
 वज्रक व महावज्रक धृत सेवन  
विविध अवस्थानुसार कुष्ठ चिकित्सा –  
 1) स्थिर कठिन मंडलयुक्त कुष्ठ मे पोटली से स्वेद कर तत्पश्चत लेखन कर लेप करे  
 2) स्पश्न ज्ञान नष्ट हुआ है व शस्त्र का उपयोग नहीं एसे कुष्ठ मे तक व दोष विस्त्रावण कर क्षार लगादे  
 3) अतिकठिन परूष सुप्त स्थिर पुराण कुष्ठ मे समंत्र लेप लगाकर अगद लेप करे  
 4) स्तब्ध सुप्तसुप्तानी अस्वेदयुक्त, कंडुयुक्त कुष्ठ मे शुष्क गोमय वा समुद्रफेन से धृष्ट कर लेप करे  
 वज्रक तैल – वातकफज त्वकरोग, दुष्टनाडीव्रण, इनगे हितकर  
 महावज्रक तैल – श्वित्र अर्श ग्रंथी गंडमाला नाशन  
 कुष्ठ मे पंचकर्म – वमन 15 दिन मे, विरेचन 1 मास मे, शिरोविरेचन 3 दिन मे, रक्तमोक्षण 6 मास मे

## 20) श्वित्रकृमीचिकित्साध्याय –

श्वित्र मे स्त्रांसनार्थ मलपूरस + गुड तत्पश्चात आतप सेवन तीन दिन तक  
 बाकुची बीज व उससे 1/4 भाग हस्ताल मिलाकर लेप (गोमूत्र पिष्टकर)  
 श्वित्र नाशनर्थ उपाय – रेचन, शोणितमोक्षण, रूक्षण, सातूभक्षण पापनाशन

## 21) वातव्याधी चिकित्सा –

निरूपस्तंभित वात चिकित्सा – केवल निरूपस्तम्भमादौ स्नेहैरूपाचरेत् ।  
 दुर्बल व अविरेच्य रूगण मे दीपन पाचन द्रव्य युक्त निरूह दान  
 आमाशयगत वात मे – षडधरण चूर्ण  
 सर्व प्रदार के वात मे तिल्वक धृत प्रयोग  
 अंतरायाम व बहिरायाम मे – अर्दितसमान चिकित्सा, तैलद्रोणी मे शयन  
 विवर्णदन्तवदन, स्त्रस्तांग, नष्टचेतन, प्रस्विद्य धनुस्तंभी दश रात्र भी जीवित नहीं रहता है  
अर्दित चिकित्सा – अर्दिते नावनं मूर्धिं तैलं श्रोत्राक्षितर्पणम् ।  
 सशोफे वमनं रगदाहयुक्ते सिराव्यधः ॥  
पक्षाघात – स्नेहनं स्नेहसंयुक्तं पक्षाघाते विरेचनम् ।  
अवबाहुक – अवबाहौ हितं नस्यं स्नेहश्चैत्तरभक्तिकः ।

## 22) वातशिणित चिकित्साध्याय –

वातरक्त मे – 1) रुग राग तोद दाह मे – जलौकावचारण

2) चिमचिमायन, कंडू, रुजा दूयन मे – शृंग व तुम्बी

3) देशादेशां व्रजत – प्रच्छान

अंगग्लानी रौक्ष्य वाताधिक्य मे – रक्तमोक्षण निषेध

वातरक्त मे स्नेहयुक्त विरेचन, वाताधिक वातरक्त मे पुराणधृत पान

वातरक्त मे बस्ती श्रेष्ठत्व – निर्हरेद्वा मलं तस्य सधृतैः क्षीरबस्तीभिः । नहि बस्तिसमं किंचिद् वातरक्तचिकित्सितम् कोकिलाक्ष कषाय पान – कोकिलाक्षकनिर्युहः पीतस्तच्छाकभोजिना । कृपाभ्यास इव ऋोधं वातरक्तं नियच्छति ॥ आवृत वात चिकित्सा –

पित्तावृत वात मे शीत उष्ण व्यत्यासात चिकित्सा

कफ व पित्त दोनो का वात पर आवरण होनेपर प्रथम पित्त की चिकित्सा करे ।

रक्तावृत वात मे वातरक्त की चिकित्सा

मेदावृत वात मे प्रमेह मेद व वातधनी चिकित्सा

सर्व आवरण मे रसोन श्रेष्ठता – सर्व चावरणं पित्तरक्तसंसर्गवर्जीतम् । रसायनविधानेन लशुनो हन्ति शीलितः ॥

## इतर स्थानोक्त विशेषता –

सर्व ग्रह विशेषतः संध्या समय मे आक्रमण करते हैं ।

शोधनादी गणसंग्रह अध्याय मे 33 गण वर्णन

रक्त को धातु व टूष्ण दोनोः कहा है

वाणी मेधा बुधि स्मृतीकर धृत – अष्टांग धृत

काश्यप धृत दन्तोद्देदजन्य रोगो मे बताया है

अरिष्ट का वर्णन शारीरस्थान मे किया है ।

बोष्काण देशस्थ हिंगु श्रेष्ठ माना गया है

वातपित्त मे ग्रीष्म, वातकफ मे वसंत, कफपित्त मे शरद ऋतुचर्या आचरण

अगस्त्यपुष्ट स्वरस नस्य – चातुर्थिक ज्वरहर

वंशलोचन के लिए तवक्षिरी शब्द प्रयोग

फलो मे द्राक्षा उत्तम बतायी है ।

वायु के परस्पर आवरण 22 बताये हैं । आवरण 1 वर्षबाद कष्टसाध्य होते हैं ।

विशेषाज्जीवितं प्राणं उदानो बलमुच्यते ।

रजन्यदो चूर्ण सर्वबालरोगेषु पूजितः ।

दंतोद्देदजन्य रोगो मे – नैगमेष ग्रह पूजा

बालग्रह काल – जन्म से 16 वर्षतक, भूतोन्माद व भूतावेश 11 साल बाद

## तंत्रयुक्ती

तंत्रयुक्ती प्रयोजन – वाक्ययोजनं अर्थयोजनं च । सु. उ. 65/4

1) वाक्ययोजनं – असम्बद्धवाक्यस्य सम्बन्धनम् ।

असम्बद्ध (असंगत) वाक्य वाक्य का सम्बन्धन (संगति) करना ।

2) अर्थयोजनं – अर्थयोजनं लीनस्य असंगतस्य चार्थस्य सङ्गतीकरणम् ।

लीन या असंगत अर्थ का प्रकाशन या सङ्गतीकरण करना ।

उपयोगिता – व्यक्ता नोकास्तु ये हार्था लीना चाप्यनिर्मला: ।

लेशोका ये च केचित्स्त्युस्तेषांचापि प्रसाधनम् ॥ सु. उ. 65/6

शास्त्र मे अव्यक्त या जो अर्थ लीन हो अनिर्मल हो तथा लेशमात्र प्रतिपादीत हो उनको स्पष्ट करना ।

उपमा – यथाऽम्बुजवनस्यार्कः प्रदीपो वेऽमनो यथा ।

प्रबोधस्य प्रकाशार्थं तथा तन्त्रस्य युक्तयः ॥ च.सि.12 व सु.उ. 65

### तंत्रयुक्ती संख्या –

- 1) सुश्रूत – 32
- 2) चरक – 36
- 3) अष्टांगसंग्रह – 36 (उत्तरतंत्र 50)
- 4) भट्टाहरिश्चन्द्र – 40 चरकन्यास के आरंभ मे
- 5) कालमेघभिषक द्वारा विरचित 'तंत्रयुक्ती विचार'

चरक व अष्टांगसंग्रहोक्त अधिक तंत्रयुक्ती – 4

- 1) प्रयोजन
- 2) प्रत्युत्सार
- 3) उद्धार
- 4) संभव

भट्टाहरिश्चन्द्रोक्त अधिक 8 तंत्रयुक्ती – उपरोक्त 4

- 1) व्याकरण (व्याख्यान)
- 2) परिप्रश्न (उद्देश)
- 3) व्युक्त्रान्ताभिधान (निर्देश)
- 4) हेतु (उपदेश)

### 1) अधिकरण –

अ) तत्र यमर्थम् अधिकृत्य प्रवर्तते कर्ता । चक्र.

जिस अर्थ का अधिकार करके कर्ता प्रयुक्त होता है उसे अधिकरण कहते हैं ।

उदा. विघ्नभूता यदा रोगः (च.सू.1) इस प्रकरण मे रोगादिक को अधिकरण बना कर महर्षियो ने आयुर्वेद का प्रकाशन किया इसलिए रोगादिक यहा अधिकरण कहलाते हैं ।

ब) यमर्थमधिकृत्योच्यते तदधिकरणम् । यथा रसं दोषं वा ॥ सु.उ.

जिस अर्थ का अधिकार करके जो अर्थ विवेचन किया जाता है उसे अधिकरण कहा जाता है ।

### 2) योग –

अ) योगो नाम योजना व्यस्तानां पदानामेकीकरणम् । चक्र.

अलग अलग रखे पदों को एकीकरण करना योग कहलाता है ।

उदा. – प्रतिज्ञाहेतूउदाहरणोपनयनिगमनादिकः । तत्र प्रतिज्ञ मातृजश्चायं गर्भः, हेतुः – मातरमन्तरेण गर्भानुपत्तेः, दृष्टान्तः – कूटागारः, उपनयनः – यथा नानाद्रव्यसमुदायात्कुटागारस्तथा गर्भनिर्वर्तनं, तस्मान्मातृजश्चयमित्येषां प्रतिज्ञायोगः, एवमन्येऽपि योगार्थः व्याख्येयाः ।

ब) येन वाक्यं युज्यते योगः । सु.उ.

जिसके द्वारा वाक्य का प्रयोग होता है ; अर्थात् किसी वाक्य में सन्निकृष्ट और विप्रकृष्ट प्रयुक्त हुए पदों का अर्थान्वय की दृष्टी से एकीकरण करना ।

### 3) पदार्थ –

अ) पदार्थो नाम पदस्य पदयोः पदानां वाऽर्थः पदार्थः । चक्र.

पद का या अनेक पदों का जो अर्थ होता है उसे पदार्थ कहते हैं ।

उदा. – तत्र ‘द्रव्यं’ इति पदेन खादयश्चेत्तनाष्ठा उच्यन्ते ।

ब) योऽर्थोऽभिहितः सूत्रे पदे वा स पदार्थः, पदस्य पदयोः पदानां वाऽर्थः पदार्थः; अपरिमिताश्च पदार्थः ।

किसी सूत्र में अथवा पद में जो अर्थ कहा गया हो उसे पदार्थ कहते हैं ।

उदा.– सन्हस्वेदान्जनेषु निर्दिष्टेषु द्वयोः त्रयाणां वा अर्थानामुपपत्तिर्दृश्यते ।

### 4) हेत्वर्थ –

अ) हेत्वर्थो नाम यदन्यत्राभिहितमन्यत्रोपपद्यते । चक्र.

एक स्थान में किया हुआ विधान अन्य स्थान पर भी लागू होना ।

उदा. – समानगुणाभ्यासो हि धातुनां वृद्धिकारणम् (सू.12) इति वातमधिकृत्योक्तं, तत्र वातस्येति वक्तव्ये यदयं समानशब्दं धातूनामिति करेति , तेन यथा वायोस्तथा रसादीनामपि समानगुणाभ्यासो वृद्धिकारमोति गम्यते।

ब) यदन्यदुक्तमन्यार्थसाधकं भवति स हेत्वर्थः। सुश्रुत

किसी अन्य वाक्य के उच्चारण से दुसरे अर्थ का समाधान हो जाय उसे हेत्वर्थ कहते हैं ।

उदा.– मृत्यिण्डोऽद्विः प्रक्लिद्यते तथा माषदुग्धप्रभृतिभिर्ब्रणः प्रक्लिद्यत इति ।

### 5) उद्देश –

अ) उद्देशो नाम संक्षेपाभिधानं । चक्र.

संक्षेप में किसी वचन को कहना उद्देश कहलाता है ।

उदा. – ‘हेतुलिङ्गौषधज्ञानं’ (सू.1) अनेन सर्वायुक्तेवाभिधेयोद्देशः।

ब) समासवचनमुद्देशः । यथा शल्यमिति । सुश्रुत

संक्षेप में कोड़ बात कहना जैसे ‘शल्यम्’ ऐसा संक्षेप में कहने से समस्त शरीर का बाधा शल्य होता है यह अर्थ बताया जाता है ।

### 6) निर्देश –

अ) निर्देशो नाम संख्येयोक्तस्य विवरणं । चक्रपाणी

संक्षेप में बताये हुए विषय का विस्तार से विवरण करना ।

उदा. – यथा हेतुलिंगौषधस्य पुनः प्रपञ्चनं “सर्वदा सर्वभावानां” इत्यादिना ‘इत्युक्तं कारणं’ (सू.अ.1)

इत्यन्तेन कारणप्रपञ्चनमित्यादि ।

सामान्य धर्मयुक्त औषध सर्व भाव पदार्थों की वृद्धी में कारण होता है। यह सामान्य कारण भी द्रव्य, गुण , कर्म सामन्य एसे तीन प्रकार का होता है यह निर्देश हुआ ।

ब) विस्तारवचनं निर्देशः । शारीरमाग्नुकम चेति । सुश्रुत

किसी वस्तु का विस्तार से वर्णन करना निर्देश कहलाता है, उदा. शल्य से शारीर शल्य व मानस शल्य ऐसे शल्य के दो भेदों का विस्तार से वर्णन करना ।

7) उपदेश –

अ) उपदेशो नाम आप्तानुशासनं । चक्रपाणी

आप्त पुरुषो की आज्ञा को मानना उपदेश कहलाते हैं । उदा. – स्नेहमग्रे प्रयुण्जीत ततः स्वेदमनन्तरम्

ब) एवमित्युपदेशः । यथा न जागृयाद्रात्रौ दिवास्वप्नश्च वर्जयेत् इति सुश्रुत

इस प्रकार का आहार एवं विहार करना चाहिए यह उपदेश कहलाता है । उदा, रात्रि में जाग्रण नहीं करना चाहिए एवं दिन में शयन भी नहीं करना चाहिए ।

8) अपदेश –

अ) अपदेशो नाम यत्प्रतिज्ञातार्थसाधनाय हेतुवचनं । चक्रपाणी

प्रतिज्ञात अर्थ की सिध्दी के लिए हेतु (वाक्य) का निर्देश करना अपदेश कहलाता है ।

उदा. – वाताज्जलं जलादेशं देशात् कालं स्वभावतः । विद्यादुष्परीहार्यत्वात् (वि.अ.3) इत्यदि तत्र प्रतिज्ञातार्थस्य हेतुवचनं – दुष्परीहार्यत्वादिति ।

ब) अनेन कारणेन इति अपदेशः । यथाऽपदिश्यते – मधुरः इलेष्माणमभिवर्धयतीति । सुश्रुत

इस कारण से यह कार्य हुआ है इसको अपदेश कहते हैं जैसे मधुर रस कफ का वर्धक होता है कफ भी मधुर रस का होने से ।

9) प्रदेश –

अ) प्रदेशो नाम यद् द्वृत्वादर्थस्य कास्त्व्यनाभिधातुमशक्यमेकदेशेन अभिधियते । चक्रपाणी

अर्थ के अधिक होने से उसका समग्ररूप से वर्णन करना असम्भव होता है अतः उसके एकदेश के वर्णन करने को प्रदेश कहते हैं ।

उदा. – अनुपानं: एकदेशोऽयमुक्तः प्रायोपयोगिकः । (सू.अ.27) जो ज्यादा उपयोग में आते हैं उन्हीं अनुपानों वर्णन किया जाता है ।

ब) प्रकृतस्यातिक्रान्तेन साधनं प्रदेशः । सुश्रुत

प्रकृत (प्रकरणगत या प्रस्तुत या वर्तमान) का अतिक्रान्त (व्यतीत या भूत) से साधन करना ।

उदा. – देवदत्तस्यानेन शल्यमुधूतं तथा यज्ञदत्तस्याप्ययमुधूरिष्यपिति ।

इसने देवदत्त का शल्य निकाला है अतएव यज्ञदत्त का भी शल्य निकालेगा ।

10) अतिदेश –

अ) अतिदेशो नाम यत्किंचिदेव प्रकश्यार्थमनुकार्थसाधनायैव एवमन्यदपि प्रत्येतव्यमिति परिभाष्यते ।

किसी वस्तु या अर्थ को यत्किंचित (अल्प) प्रकार से कह कर उससे अनुक अर्थ का ज्ञान कर लेने को कह देना अतिदेश है । चक्रपाणी

उदा. – यथा ‘यच्चान्यदपि किंचित् स्यादनुकमिह पूजितम् । वृत्तं तदपि चात्रेयः सदैवाभ्यानुमन्यते (सू.अ.8) सूत्रस्थान 8 में आत्रेय कहते हैं की इस विषय में हमने जो नहीं कहा है किन्तु अन्यत्र इसी प्रकार का वृत्त (अर्थ या उपदेश) हो उसे स्विकृत कर लेता हु ।

ब) प्रकृतस्यानगतस्य साधनमतिदेशः । सुश्रुत

प्रकृत (उपस्थित या वर्तमान) के द्वारा अनागत (भविष्य) का साधन करना अतिदेश कहलाता है ।

उदा. – यतोऽस्य वायुरुर्ध्वमुक्तिष्ठते तेनोदावर्ती स्यादिति ।

इस व्यक्ति का वात उपर उठ रहा है इससे प्रतीत होता है की इसे उदावर्त रोग होगा ।

11) अपवर्ग –

अ) अपवर्गो नाम साकल्येन उद्दिष्टस्य एकदेशापकर्षणं । चक्रपाणी  
संपूर्ण रूप मे वर्णित विषय मेसे एक देश (भाग) को अपकर्षित करना अपवर्ग कहलाता है ।

उदा. – न पर्युषितान्नम् आददीत अन्यत्र मांसहरीतकशुष्कशाकफलभक्षेभ्यः । (सू.अ.8)

पर्युषित अन्न नहीं ग्रहण करना चाहिए; मांस हरीत शुष्क शाक फल छोड़कर ।

ब) अभिव्याप्यापकर्षणमपवर्गः । सुश्रुत

किसी वस्तु या विषय का व्यापक रूप से निषेध कर उसमे से किसी एक का विधान कर देना अपवर्ग कहलाता है ।

उदा. – अस्वेद्या विषोपसृष्टाः; अन्यत्र कीटविषादिती ।

सर्व विषोपसृष्ट अस्वेद्य होते हैं अपवाद कीट विष (कीटविष मे स्वेदन कर सकते हैं)

12) वाक्यशेष –

अ) वाक्यशेषो नाम यल्लाघवार्थम् आचार्येण वाक्येषु पदमकृतं गम्यमानतया पूर्यते । चक्रपाणी  
वाक्य के लाघवार्थ (लघु करने के लिए) किसी शब्द के न लिखने पर भी वह गम्यमान हो जाय ।  
उदा. – यथा ‘प्रवृत्तिर्हेतुभावानां (सू.अ.16) इत्यत्र ‘अस्ति’ इति पदं पूर्यते, तथा ‘जांगलजैः रसैः’ इत्यत्र ‘मांसशब्दः’ पूर्यते ।

ब) येन पदेनानुकेन दाक्यं समाप्यते स वाक्यशेषः । सुश्रुत

किसी पद के उच्चारण या लेखन न करने पर भी उसका अध्याहार होकर वाक्य समाप्त हो जाता है उसे उदा. – शिरःपाणिपादपार्थपृष्ठोदरोरसामित्युके पुरुषग्रहणं विनाःपि गम्यते पुरुषस्येति ।

13) अर्थापत्ति –

अ) अर्थापत्तिर्नाम यद् अकिर्तितम् अर्थात् आपद्यते साऽथापत्तिः । चक्रपाणी  
जिससे अकथित विषय या अर्थ का ज्ञान होता है ।

उदा. – नकं दधिभोजन निषेध , अर्थात् दिवा भुंजीत इति आपद्यते ।

ब) यदकीर्तिर्तमर्थादापद्यते साऽथापत्तिः । सुश्रुत

अकिर्तीत अर्थात् वर्णन न किये हुए अर्थ का ज्ञान होता है ।

ओदनं भोक्ष्ये इति उके अर्थे आपनं भवति – नायं पिपासुर्यवागुमिती ।

14) विपर्य –

अ) विपर्यो नाम अपकृष्टात् प्रतीपोदाहरणं । चक्रपाणी

वर्णित विषय के विपरीत विषय का उदाहरण

उदा. – निदानिकानि अस्य नोपशेरते विपरितानी चोपशेरते ।

निदान मे वर्णित आहार से उपशय नहीं मिलता; उसके विपरीत आहार से उपशय मिलेगा ।

ब) यद्यत्राभिहितं तस्य प्रतिलोम्यं विपर्यः । सुश्रुत

जो भी कुछ कहा गया हो या विधान हो उससे विपरीत जहा ग्रहण किया जाता हो ।

उदा. – कृशाल्पप्राणभीरवो दुश्चिकित्स्या इत्युके विपरीतं गृह्यते दृढादयः सुचिकित्स्या इति ।

15) प्रसंग –

अ) प्रसंगो नाम पूर्वाभिहितस्यार्थस्य प्रकरणगत्वादिना पुनरभिधानं । चक्रपाणी

पूर्वोक्त अभिहित (वर्णित) अर्थ का प्रकरण उपस्थित होने पर पुनः वर्णन करना प्रसंग कहा जाता है

उदा. – ‘तत्रातिप्रभवतां दृश्यानातिमात्र दर्शनम् अतियोगः (सू.अ.11) एवमाद्यभिधाय पुनः ‘अत्युग्रशब्द

श्रवणाच्छ्रवणात् सर्वशो न च (शा.अ.1) इत्यादिना पूर्वोक्त एवार्थोऽभिधियते ।  
अतिप्रभाववाले दृश्यो का अतिर्दर्शन अतियोग कहलाता है(सू.अ.11) इसी बात को पुन शारीरस्थान मे उपस्थित होने पर अत्यन्त उग्र शब्द का श्रवण अतियोग कहा जाता है ऐसा वर्णन है ।

ब) प्रकरणान्तेन समापनं प्रसंगः; यद्वा प्रकरणान्तरितो योऽर्थोऽसकृदुकः समाप्यते स प्रसंगः । सुश्रुत  
अन्य प्रकरण मे उल्लिखीत किसी अर्थ का बार बार उल्लेख समाप्त करना प्रसंग कहलाता है ।  
उदा.- यथा पण्चमहाभूतशरीरिसमवायः पुरुषः तस्मिन क्रिया सोऽधिष्ठानमिति वेदोत्पत्तावभिधाय भूतचिन्नायां  
पुनरूक्तं यतोऽभिहितं पण्चमहाभूतशरीरिसमवायः पुरुषः इति, स खल्वेष कर्मपुरुषश्चिकित्साधिकृत इति ।

**16) एकान्त -**

- अ) एकान्तो नाम यदवधारणेन उच्यते । चक्रपाणी  
निश्चयपूर्वक विधान करना एकान्त कहा जाता है ।  
उदा. - निजः शारीर दोषोत्थः, त्रिवृतविरेचयति इत्यादी । नीज रोग शारीर दोषो से उत्पन्न होते है ।  
त्रिवृत विरेचन करता है ।
- ब) (सर्वत्र) यदवधारणेन उच्यते स एकान्तः । सुश्रुत  
सर्वत्र (सर्व अवस्थओ मे) जो बात निश्चयपूर्वक कही जाती है ।  
उदा. - त्रिवृत विरेचयति, मदनफलं वामयति ।

**17) अनेकान्त -**

- अ) अनेकान्तो नाम अन्यतरपक्ष अनवधारण । चक्रपाणी  
किसी भी एक पक्ष का निश्चितीपूर्वक विधान न करना ।  
उदा.- ये हातुरा: केवलाद्वेषजादृते मियन्ते, न चंते सर्व एव भेषजोपपन्नाः समुत्तिष्ठेरन् (सू.अ.10)  
जो रोगी भेषज के अभाव से मृत्यु को प्राप्त होते है वे सर्व भेषज के प्राप्त होने से सस्थ नही होते है ।  
ब) क्वचित्था क्वचिदन्यथेति यः सोऽनेकान्तः । सुश्रुत  
किसी स्थल पर बैसा और किसी स्थल पर अन्यथा हो उसे अनेकान्त कहते है ।  
उदा. - केच्चिदाचार्या ब्रुवन्ते द्रव्यं प्रधानं, केचिद्रसं, केचिद्वीर्यं, केचिद्विपाकं इति ।

**18) पूर्वपक्ष -**

- अ) पूर्वपक्षो नाम प्रतिज्ञातार्थसंदूषकं वाक्यं । चक्रपाणी  
प्रथम प्रतिज्ञात (घोषित) कर देना; पश्चात उसे दूषित कर देते हुए दुसारा वाक्य कहना ।  
उदा. - 'मत्स्यान्न पयसाऽभ्यवहरेत्' इति प्रतिज्ञातस्य अर्थस्य 'सर्वानेव मत्स्यन्न पयसा अभ्यवहरेदन्यत्र  
चिलचिमात् (सू.अ.26)
- ब) आक्षेपपूर्वकः प्रश्नः पूर्वपक्षः । सुश्रुत  
किसी विषय का आक्षेप करते हुए प्रश्न करना पूर्वपक्ष कहा जाता है ।  
उदा. - कथं वातनिमित्ताश्वत्वाः प्रमेहा असाध्या भवन्तीति ।

**19) निर्णय -**

- अ) निर्णयो नाम विचारितस्यार्थस्य व्यवस्थापनं । चक्रपाणी  
पूर्ण रूप से विचारीत किये अर्थ की व्यवस्था करना निर्णय कहलाता है ।  
उदा. - चतुष्पदभेषजत्वादि विचारं कृत्वाऽभिधीयते - 'यदुकं षोडशकलं पूर्वाध्याये भेषजं तद्युक्तियुक्तं  
अलं आरोग्याय' (सू.अ.10) इति -पूर्वाध्याय मे जो षोडशकलायुक्त भेषज कहा गया है उसका युक्ती  
युक्त प्रयोग करनेपर आरोग्य प्राप्ति होती है ।

ब) तस्योत्तरं निर्णयः । सुश्रुत – किसी प्रश्न के उत्तर को निर्णय कहते हैं  
उदा. – शरीरं प्रपीड्य पश्चादधो गत्वा वसामेदोमज्जानुविधं मूर्त्वं विसृजति वातः, एवमसध्या इति वातजा इति ।  
(उपरोक्त वातज प्रमेह के असाध्यत्व का उत्तर )

20) अनुमत-

अ) अनुमतं नाम एकीय मतस्य अनिवारणे अनुमनं । चक्रपाणी  
उदा. – गर्भशल्यस्य जरायुःप्रपातनं कर्म संशमनं इति एके (शा.अ.8) इत्यादी एकीयमतं प्रतिपाद्य  
अप्रतिषेधात् अनुमन्यते । गर्भशल्य की संशमन चिकित्सा इस एकीय मत का प्रतिषेध न  
करते हुए उसको अनुमती देना ।  
ब) परमतप्रतिषिधमनुमतम् । सुश्रुत  
उदा,- यथा अन्यो ब्रूयात् सप्त रसा इति, तच्चाप्रतिषेधादनुमन्यते कथण्चिदिति ।

21) विधान-

अ) विधानं नाम सूत्रकारश्च विधाय वर्णयति । चक्रपाणी  
सूत्रकार विधान कर के जिसका वर्णन करते हैं ।  
उदा. – मलायननि बाध्यन्ते दुष्टैर्मात्राधिकर्मलैः इत्यत्र दुष्टिशब्देन मलानां हीनत्वमधिकत्वमाचार्यगृहीतम्  
आचार्यो वर्णयति – “मलवृद्धिं गुरुतया लाघवान्मलसंक्षयम् । मलायनानां बुध्येत संगोत्सर्गादतीव च”  
(सू.अ.7) इनि केचित्तु प्रकरणानुपूर्वाऽर्थभिधानं विधानं आहुः, यथा – रसरूधिग्रामांसमेदोस्थिमज्जाशुक्राणां  
उत्पादक्रमानुरोधेनाभिधानम् ।  
दूषित मल के द्वारा मलायन बाधीत होते हैं; इसमे ‘दुष्टी’ शब्द से मल का हीनत्व या अधिकत्व यह अर्थ  
आचार्य द्वारा ग्रहण किया जाता है; उस अनुसार मलवृद्धी का अनुमान गुरुता से व मलक्षय का अनुमान  
मलायन लाघवता से करे एसा आचार्य का आगे का अनुरूप कथन है। केचित मत से प्रकरण के आनुपूर्व  
से जो विषय कथन किया जा रहा है उस क्रम के अनुसार वर्णन को विधान कहते हैं ।  
ब) प्रकरणानुपूर्वाभिहितं विधानम् । सुश्रुत  
प्रकरण के अनुपूर्व (प्रकरणप्राप्त) किसी का वर्णन करना विधान है  
उदा. – सक्रियमर्माणि एकादश प्रकरणानुपूर्वाऽभिहितानि ।

22) अनागतावेक्षण-

अ) अनागतावेक्षणं नाम यदनागतं विधिं प्रमाणीकृत्यार्थसाधनं । चक्रपाणी  
अनागत (न आये हुए) विषय को प्रमाणीत कर विषय की सिध्दी करना ।  
उदा. – ‘अथवा तिक्तसर्पिषः’ इत्याद्यनागतावेक्षणेनोच्यते ।  
ब) एवं वक्ष्यतीत्यनागतावेक्षणम् । सुश्रुत – किसी अनागत (भविष्य) विषय का कार्यार्थ अवेक्षण करना ।  
उदा.- यथा इलोकस्थाने ब्रूयात् –चिकित्सितेषु वक्ष्यामीति ।  
इलोकस्थान मे कहना की यह विषय चिकित्सास्थान मे विस्तार से कहा जायेगा ।

23) अतीतावेक्षण-

अ) अतीतावेक्षणं नाम यदतीतमेवोच्यते । चक्रपाणी- अतीत विषय का (संदर्भानुरूप) स्मरण करना  
उदा. – सा कुटी तच्च शयनं ज्वरं संशमयति अपि (चि.अ.3) इत्यत्र स्वेदाध्यायविहीतकुव्यादिकमतीतमवेक्षते  
ब) अतीक्रान्तावेक्षण (सुश्रुत) – यत्पूर्वमुक्तं तदतिक्रान्तावेक्षणम् ।  
उदा. – यथा चिकित्सितेषु ब्रूयात् – इलोकस्थाने यदीरितमिति ।

## 24) संशय –

अ) संशयो नाम विशेषाकांक्षानिर्धारितोभयविषयज्ञानं । चक्रपाणी  
 विशेष ज्ञान करने की इच्छा से उभय (दोनों) प्रकार के उत्तर जहा हो उसे संशय कहते हैं ।  
 उदा. – मातरं पितरं चैके मन्यन्ते जन्मकारणम् । स्वभावं परनिर्माणं यदुच्छां चापरे जनाः । (सू.अ.11)

## ब) उभयहेतुदर्शनं संशयः । सुश्रुत

दो प्रकार के असमान अर्थों के हेतु का वर्णन करना संशय कहा जाता है ।  
 उदा.– तलहृदयाभिघातः प्राणहरः पाणिपादच्छेदनमप्राणहरमिति । तलहृदय मर्म पर आघात से प्राणहरण होता है तथा पाणि व पाद च्छेदन से प्राणहरण नहीं होता ।

## 25) व्याख्यान –

अ) व्याख्यानं नाम यत् सर्वबुद्ध्य विषयं व्याक्रियते । चक्रपाणी  
 सर्व बुधी को गम्य हो इस प्रकार से विषय का विवरण करना ।  
 उदा.– प्रथमे मासि संमूच्छितः सर्वधातुकलुषीकृतः खेटभूतो भदत्यविग्रहः (शा.अ.4)  
 ब) तन्त्रे अतिशयोपर्णनं व्याख्यानम् । सुश्रुत  
 तन्त्र मे किसी अतिरीक्त (अधिक या विशिष्ट) अर्थ (वस्तु) का वर्णन करना व्याख्यान कहा जाता है ।  
 उदा.– इह पण्चविंशतिकः पुरुषो व्याख्यायते, अन्येष्वायुर्वेदतन्त्रेषु भूतादिप्रभृत्यारभ्य चिन्ता ।

## 26) स्वसंज्ञा –

अ) स्वसंज्ञा नाम या तन्त्रकरैर्व्यवहारार्थं संज्ञां क्रियते । चक्रपाणी  
 तन्त्रकरो द्वारा व्यवहारार्थ जो संज्ञा प्रयुक्त की जाती है ।  
 उदा.– झूळाक होलाक इ संज्ञा  
 ब) अन्यशास्त्रासामान्य स्वसंज्ञा । सुश्रुत  
 अन्य शास्त्रो से असमान परंतु अपने शास्त्र मे किसी वस्तु के नामकरणार्थ दी जानेवाली संज्ञा  
 उदा.– मिथुनमिति मधुसर्पिषोग्रहणम्, लोकप्रसिद्धौदाहरणं वा ।

## 27) निर्वचन –

अ) निर्वचनं तु पण्डितबुद्धिवेदयमेव; किंवा निर्वचनं निरूक्तिः । चक्रपाणी  
 पण्डितो के द्वारा बुद्धिगम्य दृष्टान्त अथवा निरूक्ति ।  
 उदा.– विविधं सर्पति यतो विसर्पस्तेन संज्ञितः ।  
 ज्ञायते नित्यगस्य एव कालस्य अत्ययकारणम् ।  
 ब) निश्चित वचनं निर्वचनं । सुश्रुत  
 उदा.– आयुर्विदयतेऽस्मिन् अनेन वा, आयुर्विन्दति इति आयुर्वेदः।

## 28) निदर्शन –

अ) निदर्शनं नाम मूर्खविदुषां बुद्धिसाम्यविषयो दृष्टान्तः । चक्रपाणी  
 ऐसा दृष्टान्त की जो मूर्ख व विद्वान दोनों को बुद्धिगम्य हो ।  
 उदा. – विज्ञातम् अमृतं यथा । ज्ञात औषधी अमृत के समान हितकर होती है ।  
 ब) दृष्टान्तव्यक्तिः निदर्शनम् । सुश्रुत  
 दृष्टान्त देकर किसी वस्तु या अर्थ का विशेष प्रकाशन करना निदर्शन कहलाता है ।  
 उदा.– अग्निर्वायुना सहितः कक्षे वृद्धिङ्गच्छति तथा वातपित्तकफदुष्टो व्रण इति । जैसे अग्नि वायु के सम्पर्क होने से कक्ष (घास का समूह) मे या कोष्ठ मे वृद्धी को प्राप्त होती है उसी प्रकार वात पित्त कफ

से दूषित व्रण भी वृद्धी को प्राप्त होते हैं।

**29) नियोग –**

अ) नियोगो नाम अवश्यानुष्ठेयतया विधानं । चक्रपाणी

आवश्यक रूप से (कर्तव्य) किया जाने वाला कार्य नियोग कहलाता है।

उदा.– न त्वया स्वेदमूर्च्छापरीतेनपि पिण्डिकैषा विमोक्षव्या (सू.अ.14) स्वेद प्रकरण में चरक ने कहा है रूग्ण को स्वेदनसमये मूर्च्छा भी आये तो भी स्वेद का चौथरा ना छोड़े।

ब) इदमेव कर्तव्यमिति नियोगः । सुश्रुत

यही करना चाहिए इस प्रकार की आज्ञा को नियोग कहते हैं। उदा. पथ्यमेव भोक्तव्यमिति ।

**30) समुच्चय –**

अ) समुच्चयो नाम यदिदं चेदं चेति कृत्वा विधियते । चक्रपाणी

यह इस प्रकार का और यह इस प्रकार का है इस विधान को समुच्चय कहते हैं।

उदा.– यथा वर्णश्च स्वर्णश्च (इ.अ.1) इत्यादी

ब) इदन्येदन्येति समुच्चयः । सुश्रुत

यह , यह और यह ऐसे अनेक अर्थ एक साथ कहना ।

उदा.– मांमवर्गे एणहरिणाटयो लावतितिरशारङ्गाश्च प्रधानानिति ।

**31) विकल्प –**

अ) विकल्पः पाक्षिकाभिधानं । चक्रपाणी

किसी भी विषय के पाक्षिक (आधे) विकल्प कथन करना ।

उदा.– सारोदकं वा कुशोदकं अथ (चि.अ6)

ब) इदं वेदं (इदं वा इदं) वेति विकल्पः । सुश्रुत

यह अथवा वह श्रेष्ठ है एसा जहा कथन है उसे विकल्प कहते हैं।

उदा. – रसौदनः सधृता यवागूर्वा (भवत्विति )

**32) उहय –**

अ) उहयं नाम यदनिबृद्धं ग्रंथे प्रज्ञया तर्कत्वेनोपदिश्यते । चक्रपाणी

किसी ग्रन्थ में लिखी न हो किन्तु प्रज्ञा (विशिष्ट बुधि) से तर्क कर ग्रहण कर ली जाय उसे उहय कहते हैं

उदा.– परिसंख्यातमपि यदयद् द्रव्यमयीगिकं मन्येत् तत्तदपकर्षयेत् । (वि.अ.8)

किसी योग मे परिगणीत किया हुआ द्रव्य बुधिमान वैद्य को अयोग्य प्रतीत हो तो उसे निकाल देना ।

ब) यदनिर्दिष्टं बुध्याऽवगम्यते तदूह्यम् । सुश्रुत

जो वस्तु या अर्थ साक्षात न कहा गया हो किन्तु बुधी से उसका उह (तर्क या अवगमन)

हो जाता हो उसे उह कहते हैं।

यथा अभिहितमन्त्रपानविधौ चतुर्विधिर्णचान्मुपदिश्यते – भक्ष्य भोज्य लेह्य पेयमिति, एवण्चतुर्विधे वक्तव्ये द्विविधमभिहितम् । चतुर्विध के उल्लेख की बजाय दो का ही (अन्न व पान) उल्लेख हो तो उससे चतुर्विध का ग्रहण करना ।

**33) प्रयोजन –**

प्रयोजनं नाम यदर्थं कामयमानः प्रवर्तते । चक्रपाणी

जिस अर्थ की कामना रखते हुए कोइ किसी कार्य मे प्रवृत्त होता है।

उदा, – धातुसाम्य क्रिया चोक्ता तन्नस्यास्य प्रयोजनम् । (सू.अ.1)

34) प्रत्युत्सार –

प्रत्युत्सारो नाम उपपत्या परमतनिवारणं । चक्रपाणी  
 उपपत्ति से (युक्ती से) परमत का निवारण (खण्डन) करना ।  
 उदा.– वायोर्विदः प्राह – ‘रसजानि तु भूतानि रजसा व्याधयाः स्मृताः’  
 (सू.अ.25) इत्यादी हिरण्याक्षो निषेधयति ‘न हि आत्मा रजसा स्मृताः’ इत्यादी ।

35) उधार –

उधारो नाम परपक्षदूषणं कृत्वा स्वपक्ष उधरणं । चक्रपाणी  
 दूसरे के पक्ष को दूषित कर स्वपक्ष की स्थापना करना उधार है ।  
 उदा. येषामेव ही भावानां संपत् संजयेन्नरम् । तेषामेव हि भावानां विगद्याद् व्याधीन् उदीरयेत् । (सू.अ.25)  
 यजपुरुषीय अध्याय मे रोग का कारण क्या है इस प्रश्न के उत्तर मे सबके मत का खण्डन कर आत्रेय  
 ने कहा की जिन भावो की संपत् (प्रशस्तता) पुरुष को उत्पन्न करती है उन्ही की विकृती रोगो की भी  
 उत्पादक है ।

36) संभव –

संभवो नाम यद् अस्मिन उपपदते स तस्य संभवः । चक्रपाणी  
 जो भाव या वस्तु जहा उपयुक्त हो वहा होना उसका संभव कहलाता है  
 उदा.– मुखे पिण्डु व्यंग नीलिकादयः सम्भवन्ती ।

भटटात्तहरिश्चद्रोक 4 तंत्रयुक्तीयो का चक्रपाणीनुसार निम्न तंत्रयुक्तीयो समावेश होता है

- 1) परिप्रश्न का – उद्देश मे
- 2) व्याकरण का – व्याख्यान मे
- 3) व्यक्तिनात्ताभिधान का – निर्देश मे
- 4) हेतु का – प्रत्यक्षादी प्रमाण हेतु मे

तंत्रयुक्ती कार्य मे दृष्टान्त –

यथा अम्बु जवनस्यार्कः प्रदीपो वश्मनो यथा । प्रवोधप्रकाशार्थस्तथा तन्नस्य युक्तयः ॥ च.सि 12

इतर वर्णन –

- 1) व्याख्या – पंचदशप्रकारा (15)      तंत्रगुण भी कहा जाता है
  - 2) कल्पना – सप्तविधि कल्पना (7)
  - 3) अर्थाश्रय – एकविंशति अर्थाश्रय (21)      अरूणदत्त – 20
  - 4) ताच्छील्य – सप्तदश ताच्छील्यानी (17)
  - 5) तन्त्रदोष – चतुर्दश तन्त्रदोष (14)      अरूणदत्त – 15
- चक्रपाणी टीका – चरकतात्पर्यटीका नाम है